ॐ

अथर्ववेदान्तर्गत-

आसुरीकल्प ।

भाषाटीकासमेत ।

तथा

उलूककल्प-भाषा ।

पं० **ईश्वरीप्रसाद पांडे** द्वारा संपादित.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक-"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,

कल्याण-मुंबई.

संवत् १९९२, शके १८५७.

1936

मुद्रक और प्रकाशक—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक—" लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्—प्रेस, कल्याण—बंबई.

॥ श्रीशिवाय नमः ॥

अथ

अन्वयभाषाटीकासहितं

उपमन्युकृतशिवस्तोत्रम् ।

जय शंकर पार्वतीपते मृड शम्भो शशिखण्ड मण्डन ॥ मदनान्तक भक्तवत्सल प्रियकैलास दयासुधाम्बुधे ॥ १ ॥

अन्वयः–हे शंकर ! हे पार्वतीपते ! हे मृड ! हे शम्भो ! हे शशिखण्डमण्डन ! हे मदनांतक ! हे भक्तवत्सल ! हे प्रियकैलास ! हे दयासुधाम्बुधे ! जय ॥ १ ॥

अर्थः–हे कल्याण करनेवाले ! हे पार्वतीजीके स्वामी हे संतोष देनेवाले ! हे शम्भु ! हे चंद्रमाको धारण करनेवाले ! हे कामदेवके नाशक ! हे भक्तोंपर करुणा करनेवाले ! हे कैलासको प्यार करनेवाले ! हे दयारूपी अमृतके समुद्र तुम्हारी जय होय ॥ १ ॥

सदुपायकथास्वपण्डितो हृदये दुःखशरेण

खण्डितः ॥ शशिखण्डशिखण्डमण्डनं शरणं
यामि शरण्यमीश्वरम् ॥ २ ॥

अन्वयः—सदुपायकथासु अपण्डितः हृदये दुःखशरेण खण्डितः (अहं) शशिखण्डशिखण्डमण्डनं शरण्यम् ईश्वरं शरणं यामि ॥ २ ॥

अर्थः—अच्छे उपायोंकी जो कथा है उसमें मूर्ख अर्थात् कुछ अच्छे २ उपाय नहीं जानता और हृदयमें दुःखरूपी बाणसे पीडित ऐसा मैं चंद्रमाके खण्डका आभूषण धारण करनेवाले और शरण देनेवाले महादेवजीकी शरणमें प्राप्त होता हूं ॥ २ ॥

महतः परितः प्रसर्पतस्तमसो दर्शनभेदिनो
भिदे ॥ दिननाथ इव स्वतेजसा हृदयव्योम्नि
मनागुदेहि नः ॥ ३ ॥

अन्वयः—परितः प्रसर्पतः दर्शनभेदिनः महतः तमसः भिदे दिननाथ इव स्वतेजसा नः हृदयव्योम्नि मनाक् उदेहि ३

अर्थः—चारों ओर फैला हुआ और दर्शनको रोकनेवाला ऐसा जो बडा भारी अंधेरा है उसके नाश करनेके

लिये सूर्यके समान अपने तेजसे मेरे हृदयरूपी आकाशमें शीघ्र उदय होउ ॥ ३ ॥

न वयं तव चर्मचक्षुषा पदवीमप्यभिवीक्षितुं
क्षमाः ॥ कृपयाऽभयदेन चक्षुषा सकलेनेश
विलोकयाशु नः ॥ ४ ॥

अन्वयः--वयं चर्मचक्षुषा तव पदवीम् अपि अभिवीक्षितुं क्षमाः न । हे ईश ! कृपया सकलेन अभयदेन चक्षुषा नः आशु विलोकय ॥ ४ ॥

अर्थः--हम चर्मके नेत्रसे तुम्हारी जो पदवी है उसेभी देखनेको योग्य नहीं हैं इस लिये हे शंकर ! कृपा करके सम्पूर्ण अभयके देनेवाले अपने नेत्रसे हमें शीघ्र देखो॥ ४ ॥

त्वदनुस्मृतिरेव पावनी स्तुतियुक्ता यदि सा
पुनस्तु किम्॥मधुरं हि पयः स्वभावतो ननु
कीदृक् सितशर्करान्वितम् ॥ ५ ॥

अन्वयः--त्वदनुस्मृतिः एव पावनी यदि स्तुतियुक्ता तु पुनः किं पयः स्वभावतः मधुरं हि सितशर्करान्वितं ननु कीदृक् ॥ ५ ॥

अर्थः--तुम्हारा स्मरणही पवित्र है और जो स्तुति करके युक्त हो तो फिर क्या कहना है दुग्ध स्वभावहीसे मधुर है और जो श्वेतशर्करायुक्त होय तो कहो कैसा अर्थात् बहुत उत्तम ॥ ५ ॥

बहवो भवतानुकम्पिता किमितीशान न मानुमन्यसे ॥ दधता किमु मन्दराचलं परमाणुः कमठेन दुर्धरः ॥ ६ ॥

अन्वयः--हे ईशान ! भवता बहवः अनुकम्पिताः किमिति मा न अनुमन्यसे मन्दराचलं दधता कमठेन परमाणुः दुर्धरः किमु ॥ ६ ॥

अर्थः--हे शंकर। आपने बहुतसोंके ऊपर कृपा करी यह क्या बात है कि मेरे ऊपर कृपा नहीं करते मन्दराचलको धारण करनेवाले कछुएको परमाणुका धारण करना क्या कुछ कठिन है अर्थात् कुछ नहीं है ॥ ६ ॥

अशुचिं यदि मानुमन्यसे किमिदं मूर्ध्नि कपालदाम ते ॥ अथ साधमसाधुसंगमं विषलक्ष्मासि न किं द्विजिह्वभृत् ॥ ७ ॥

अन्वयः—यदि मा अशुचिं अनुमन्यसे ते मूर्ध्नि इदं कपालदाम अथ असाधुसंगमं सावघम् (त्वं) विषलक्ष्मा द्विजिह्वभृत् किं न असि ॥ ७ ॥

अर्थः—जो तुम मुझे अपवित्र मानते हो तो तुम्हारे गलेमें भी मुण्डोंकी माला पडी है और जो असाधुके संग करनेमें पाप है तो क्या तुम्हारे विषका चिह्न नहीं है और तुम सर्पोंको धारण नहीं करते ॥ ७ ॥

सविषोप्यमृतायते भवान् शवमुण्डाभरणोपि पावनः ॥ भव एव भवान्तकः सतां समदृष्टिर्विषमेक्षणोपि सन् ॥ ८ ॥

अन्वयः—भवान् सविषः अपि अमृतायते शवमुण्डाभरणः अपि पावनः भवांतक[1] । (किंतु) सतां भव एव विषमेक्षणः अपि सन् समदृष्टिः ॥ ८ ॥

अर्थः—तुम विषकरके युक्त हो तो परन्तु अमृतके

---

१ भवान् भवः अपि सतां भवांतक एव—इति तृतीयपादस्य योजना मुद्रणालयाधिकृतशास्त्रिसंमता ।

समान आनंद दायक हो और मुर्दोंके मुंडोंका आभरण तो पहरते हो किंतु पवित्र हो तुम संसारके नाशक हो तो किंतु सज्जनोंको मंगलदायक हो तुम विषम दृष्टि हो तो अर्थात् तुम्हारे तीन नेत्र तो हैं किंतु समदृष्टि हो अर्थात् सबको समान देखते हो ॥ ८ ॥

अपि शूलधरो निरामयो दृढवैराग्यरतिश्च रागवान् ॥ ननु भैक्ष्यचरो महेश्वरश्चरितं चित्रमिदं हि ते प्रभो ॥ ९ ॥

अन्वयः—शूलधरः अपि निरामयः रागवान् (अपि) दृढवैराग्यरतिः भैक्ष्यचरः (अपि) महेश्वरः हे प्रभो ! ते इदं चरित्रं चित्रं ननु ॥ ९ ॥

अर्थः—शूलको धारण तो करते हो परन्तु रोगरहित हो तुम संसारके सुखोंसे युक्त हो तो परन्तु पक्के वैराग्यमें तुम्हारी प्रीति है भिक्षुक तो हो किंतु महेश्वर हो इस लिये हे प्रभो ! तुम्हारा यह चरित्र सचमुच बडा विचित्र है ॥ ९ ॥

वितरत्यभिवाञ्छितं दृशा परिदृष्टः किल

कल्पपादप॑ ॥ हृदये स्मृत एव धीमते नम-
तेऽभीष्टफलप्रदो भवान् ॥ १० ॥

अन्वयः—दृशा परिदृष्टः कल्पपादपः अभिवाञ्छितं वितरति किल भवान् हृदये स्मृत एव नमते धीमते अभीष्ट फलप्रदः ॥ १० ॥

अर्थः—आपकी दृष्टिसे देखा गया कल्पवृक्ष निश्चय करके मनोवांछित फल देता है और तुम तो हृदयमें स्मरण करतेही विनय करते हुए बुद्धिमानको अर्थात् भक्तजनको अभीष्ट फल देते हो ॥ १० ॥

सहसैव भुजंगपाशवानवगृह्णाति न यावद-
न्तकः ॥ अभयं कुरु तावदाशु मे गतजीव
स्य पुनः किमौषधैः ॥ ११ ॥

अन्वयः—भुजङ्गपाशवान् अन्तकः यावत् सहसा एव न अवगृह्णाति तावत् मे आशु अभयं कुरु गतजीवस्य पुनः औषधैः किम् ॥ ११ ॥

---

१ यह शब्द अनन्वित है ।

अर्थः—सर्पका पाशलिये यमराज जब तक मुझे एका-एकी न ग्रहण करने पावे तबतक आप मुझे भयरहित करो क्योंकि जब जिस पुरुषके प्राण चले गये तब उस पुरुषको औषधियोंसे क्या होता है ॥ ११ ॥

सविषैरिव भीमपन्नगैर्विषयैरेभिरलं परिक्ष-
तम् ॥ अमृतैरिव सम्भ्रमेण मामभिषिञ्चाशु
दयावलोकनैः ॥ १२ ॥

अन्वयः—सविषैः भीमपन्नगैः इव एभिः विषयैः अलं परिक्षतं मां सम्भ्रमेण अमृतैः इव दयावलोकनैः आशु अभिषिञ्च ॥ १२ ॥

अर्थः—विषकरके युक्त भयंकर सर्पोंके समान इन सांसारिक विषयोंकरके मुझ डसे हुएको वेगसे अमृतके समान अपनी दयादृष्टिसे शीघ्र शीतल करो ॥ १२ ॥

बहवो मुनयोऽप्यदीनतां गमिताः स्वाभिमता
र्थलाभतः ॥ करुणाकर येन तेन मामवसन्नं
ननु पश्य चक्षुषा ॥ १३ ॥

अन्वयः—हे करुणाकर ! येन बहवः मुनयः अपि स्वाभिमतार्थलाभतः अदीनतां गमिताः ननु तेन चक्षुषा अवसन्नं मां पश्य ॥ १३ ॥

अर्थः—हे करुणानिधान ! जिस आपकी दृष्टिके द्वारा बहुतसे मुनिभी अपने मनोरथकी लाभसे प्रसन्नताको पहुं-चाये गये उस नेत्रसे मुझ दुःखीको अवश्य देखिये॥१३॥

प्रणमाम्यथ यामि वापरं शरणं कं कृपयाभ
यप्रदम् ॥ विरहीव विभो प्रियामयं परिपश्या-
मि भवन्मयं जगत् ॥ १४ ॥

अन्वयः—अथ कृपया अभयप्रदं अपरं कं प्रणमामि वा शरणं यामि । हे विभो ! विरही इव जगत् प्रियामयं भवन्मयं परिपश्यामि ॥ १४ ॥

अर्थः—और कृपासे अभयके देनेवाले ऐसे किस दूस-रेको मैं नमस्कार करूं अथवा शरण जाऊँ हे प्रभो ! विरहीके समान सब जगत्को प्रियामय और आपमय देखता हूं ॥ १४ ॥

विलुठाम्यवनौ किमाकुलं किमुरो हन्मि शि-
रश्छिनद्मि वा ॥ किमु रोदिमि रारटीमि किं
कृपणं मां न यदीक्षसे प्रभो ॥ १५ ॥

अन्वयः–हे प्रभो ! यदि मां कृपणं न ईक्षसे तदा अवनौ आकुलं न विलुठामि किं ? उरः न हन्मि वा शिरः न छिनद्मि किमु न रोदिमि किं न रारटीमि ॥ १५ ॥

अर्थः–हे प्रभो ! जो मुझ दीनको आप नहीं देखोगे तौ क्या मैं पृथ्वीपर व्याकुल होकर नहीं लोटूंगा, अर्थात् लोटूंहीगा और क्या छाती नहीं पीटूंगा, वा शिर नहीं काटूंगा और क्या नहीं रोऊंगा, अथवा क्या रटना नहीं करूंगा; अर्थात् जो न देखोगे तौ सबही करूंगा ॥१५॥

क्व दृशं विदधामि किं करोम्यथ तिष्ठामि
कथं भयाकुलः ॥ क्व नु तिष्ठसि रक्ष रक्ष मां
शिव शम्भो शरणागतोस्मि ते ॥ १६ ॥

अन्वयः–हे शिव ! दृशं क्व विदधामि किं करोमि अथ भयाकुलः कथं तिष्ठामि । हे शंभो ! क्व नु तिष्ठसि

रक्ष रक्ष (अहं) ते शरणागतः अस्मि ॥ १६ ॥

अर्थः—हे शंकर ! मैं अपनी दृष्टि कैसे धारण करूं और क्या करूं और भयसे व्याकुल होता हुआ कहां बैठूं तुम कहां बैठे हो मेरी रक्षा करो रक्षा करो मैं तुम्हारे शरणागत हूं ॥ १६ ॥

शिव सर्वद शर्व सर्वग मयि देव प्रणते दयां
कुरु ॥ नम ईश्वर नाथ दिक्पते पुनरेवेश
नमो नमोस्तु ते ॥ १७ ॥

अन्वयः--हे शिव ! हे सर्वद ! हे शर्व ! हे सर्वग ! हे देव ! हे ईश्वर ! हे नाथ ! हे दिक्पते ! प्रणते मयि दयां कुरु । हे ईश ! पुनः एव ते नमो नमः अस्तु ॥ १७ ॥

अर्थः--हे शिव ! हे संपूर्ण संपत्तिके देनेवाले ! हे कल्याण करनेवाले ! हे सर्वव्यापी ! हे ईश्वर ! हे स्वामी ! हे दिशाओंके पति ! मैं आपका भक्त हूं मुझपर दया करो तुमको नमस्कार है और फिरभी तुमको वारंवार नमस्कार है ॥ १७ ॥

शरणं तरुणेंदुशेखरः शरणं मे गिरिराजक-
न्यका॥शरणं पुनरेव तावुभौ शरणं नान्यदु-
पैमि दैवतम् ॥ १८ ॥

अन्वयः--तरुणेंदुशेखरः मे शरणं गिरिराजकन्यका मे शरणं पुनः तौ उभौ एव शरणम् अन्यत् दैवतं शरणं न उपैमि ॥ १८ ॥

अर्थः--तरुण अर्थात् द्वितीयाके चंद्रमाको धारण करनेवाले शिवाजीकी शरण हूं और हिमाचलकी कन्या जो पार्वतीजी हैं उनकी शरण हूं और फिर मैं उन दोनों शिवपार्वतीकी शरण हूं और दूसरे देवताकी शरण नहीं पाता हूं ॥ १८ ॥

उपमन्युकृतं स्तवोत्तमं पठितुः शम्भुसमीप-
वर्त्तिनः॥ अभिवाञ्छितभाग्यसम्पदः परमोक्षं
प्रददाति शंकरः ॥ १९ ॥

अन्वयः--शंकरः शम्भुसमीपवर्तिनः उपमन्युकृतं स्तवोत्तमं पठितुः अभिवाञ्छितभाग्यसंपदःपरमोक्षं च प्रददाति॥

प्रस्तावना ।



प्रिय पाठकवृन्दो ! तन्त्रशास्त्रके अनेक पुस्तक देखे होंगे परन्तु यहभी एक अद्वितीय है, इससे मनोकामना पूर्ण होगी परिश्रमभी कम होगा । यह अथर्ववेदान्तर्गत है नवीन कल्पित नहीं । आसुरी नाम राईका ही प्रयोग प्रधान है देखेगा सो निहाल होगा, बोल अटल छत्रकी जय ! इस पुस्तकका सर्वाधिकार सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना मुम्बईको दियागया इसलिये अन्य कोईभी छापने आदिका साहस न करें ।

आपका–

ईश्वरीप्रसाद पाण्डे,

"संस्कृतपुस्तकालय" सदरबाजार,

मेरठ.



आसुरीकल्प ।

भाषाटीकासमेत ।

ॐकाररूप श्रीगणेशजीको स्मरण कर अब आसुरी-कल्प आरंभ करते हैं ।

अथ मूलमन्त्रः ।

ॐ कटुके कटुकपत्रे सुभगे आसुरी रक्ते रक्त-वाससि अथर्वणस्य दुहितः अघोरे अघोरकर्म-कारिके अमुकस्य गतिं दहदह हनहन पचपच मथमथ तावद्दहदह तावत्पचपच यावन्मे वशमानय स्वाहा ॥ इति मूलमन्त्रः ॥

अथ प्रयोगः ।

ॐ अस्य श्रीमदासुरीदुर्गामहामन्त्रस्य आङ्गिरा ऋषिः । विराट्ट छन्दः । आसुरीदुर्गा देवता । ॐ बीजम् । आपः (स्वाहा) शक्तिः । ममामुककार्यकरणार्थं जपे विनियोगः ॥ १ ॥

इस आसुरीदुर्गा महामन्त्रका अंगिरा ऋषि है, विराट् छन्द और आसुरी दुर्गाजी देवता है, प्रणव इसमें बीज है, जल (स्वाहा शक्ति) है, मेरा अमुक काम करनेके लिये जपमें विनियोग है ॥ १ ॥

अङ्गिराऋषये नमः शिरसि । अनुष्टुप्छन्दसे नमो मुखे । ॐ बीजाय नमो हृदि । ॐ आपः शक्तये नमो गुह्ये । विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ॥ इति ऋष्यादिन्यासः ॥ २ ॥

अंगिरा ऋषिके अर्थ नमस्कार है, ऐसा कहकर शिरमें हाथ लगावे । अनुष्टुप्छन्दके अर्थ नमस्कार है, ऐसा

कहकर मुखको स्पर्श करे। ॐकारबीजके अर्थ नमस्कार है, ऐसा बोलकर हृदयपर हाथ धरे । आप शक्तिके अर्थ नमस्कार है, ऐसा कह पीठपीछे हाथको मेरुदंडपर रक्खे । विनियोगरूपके अर्थ नमस्कार है, ऐसा बोलकर समस्त अंगपर हाथ फेरे और प्राचीन संप्रदायके अनुसार एक चमची जल छोडदे ॥ यह ऋष्यादिन्यास पूरा हुआ॥ २॥

अथ षडङ्गन्यासः—ॐ कटुके कटुकपत्रे हुं फट् स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः । सुभगे आसुरी हुंफट् स्वाहा तर्जनीभ्यां नमः । रक्ते रक्तवाससि हुंफट्स्वाहा मध्यमाभ्यां नमः।अथर्वणस्य दुहिते हुंफट् स्वाहा अनामिकाभ्यां नमः । अघोरे अघोरकर्मकारिके अथर्वणस्य दुहितः हुंफट् स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां नमः । अमुकस्य गतिं दहदह हन २ पच २ मथ २ तावद्दह २ यावन्मे वशमानय स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। रक्तवाससि हुंफट् स्वाहा शिखायै वषट् ।

अथर्वणस्य दुहित हुंफट् स्वाहा कवचाय हुं । अघोरे अघोरकर्मकारिके हुंफट् स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट् । अमुकस्य गतिं दह २ हन२ इत्यादि हुंफट् स्वाहा अस्त्राय फट् ॥ इति षडङ्गन्यासः ॥ ३ ॥

अब षडङ्गन्यास लिखतेहैं–पहले मंत्रसे दोनों हाथके अंगूठोंको छुवे । दूसरा मन्त्र पढकर अंगूठेके पासकी अंगुलियोंको छुवे । तीसरेसे बीचकी अंगुलियोंको स्पर्श करै । चौथेसे अनामिकाओंको छुवे । पांचवें मंत्रसे छोटी अंगुलियोंको छुवै । फिर छठेसे हाथके नीचे हाथ रख दोनोंकी पीठ मिलावे । सातवें मन्त्रको पढकर शिखा छुवे । आठवेंसे दोनों बाजुओंको छुवे । नववेंसे नेत्रोंमें हाथ लगावे । दशवें मन्त्रसे करध्वनि करके तालशब्द करे ॥ इति अंगन्यास–करन्यास ॥ ३ ॥

अथ ध्यानम् ।

बालेन्दुश्वेतवर्णां विकसितनयनां वामहस्त-

त्रिशूलं दक्षे स्थाल्यंकुशाढ्यां हृदरुणवदनां नागयज्ञोपवीताम् । नानालंकारयुक्तां सुललितवदनां तुर्यवेदस्य पुत्रीं दुर्गां पद्मासनस्थामखिलवशकरीमासुरीं त्वां नमामि॥ ॥ ४ ॥ इति ध्यानम् ॥

दोयजके चांदकासा सपेद वर्ण, खिलेहुए नेत्र, बायें हाथमें त्रिशूल, दहिनेमें थाली और अंकुश और लाल रंगका हृदय और सुख, सर्प यज्ञोपवीत, अनेक प्रकारके गहनोंसे युक्त, सुंदर सुख और अथर्ववेदकी पुत्री ऐसी पद्मासन लगाये हुई दुर्गाजी सबको वश करनेवाली आसुरी नाम देवी ! तुमको नमन करताहूं ॥ ४ ॥ इति ध्यान ।

अथ प्रयोगादावयुतजपः कार्यः। ततः कार्यात् आसुर्याः सूक्ष्मचूर्णं कृत्वा घृतमिश्रं पिष्ट्वा मूर्तिं कृत्वा अथ प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हंसः अमुकस्य प्राण

इह प्राणः । अमुकस्य जीव इह स्थिरो भव । अमुकस्य सर्वेन्द्रियाणि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । तन्मूर्तेरुपरि करन्यासं योजयेत् । तिथिवारादिनियमो नास्ति । यदा प्रयोगः कर्त्तव्यस्तदैव सिद्धिः ॥ ९ ॥

प्रयोग जब आरंभ करै तब पहिले मूलमंत्रका दश सहस्र १०००० जप करै । पीछे कार्यके अनुसार जप करै । आसुरी–राई नाम ओषधीका सूक्ष्म चूर्ण करके घी मिलावे, पुनः पीसकर शत्रुकी मूर्ति बनावे । फिर प्राण-प्रतिष्ठा करे । ॐ आं ह्रीं इस मन्त्रसे अमुक पुरुषके प्राण यहां आवे । जीव यहां आवे स्थिर हो । अमुककी सारी इन्द्रियां यहां आकर सुखके साथ बहुत कालतक ठहरें । उस मूर्तिपर करन्यास करै । तिथि वार आदिका नियम नहीं है । जब प्रयोग करै तबही सिद्धि होय ॥ ९ ॥

१–शब्दकल्पद्रुम देखो ।

अथ राजभूपत्योर्वशीकरणम्।

कुर्वन्ति भूमिपालान्वा राजवश्यं करोति वा।
जुहुयादासुरीपिष्टमाज्येन सहितं बुधः॥
साध्यस्य प्रतिमां कृत्वा पादेनाक्रम्य तां ततः। अर्केन्धनेन प्रज्वाल्य आसुरीसुपिष्टैः साध्यकप्रतिमां कृत्वा अर्कसमिधः प्रज्वाल्य दक्षिणपादमाक्रम्य घृताक्तां मुक्तकेशो दक्षिणाभिमुखो रक्तवासा वामहस्तेन फट्पल्लवं संयोज्य जुहुयात्॥ ६॥

आसुरी नाम औषधिकी पिट्ठी बनाकर घीके साथ पण्डित हवन करे तौ स्वयं राजा होवे अथवा राजाको भी वशीभूत करै। साध्यकी मूर्ति बनाकर पीछे पैरसे दबावे। आककी लकडीसे जलाकर आसुरीको सुन्दर रीतिसे पीसकर साध्यककी प्रतिमा करके आककी समिधा जलाकर दाहिने पैरसे दबाकर घीमें

मिला शिर खोल दक्षिणमुख किये लाल कपडे पहन बायें हाथसे 'फट्' पल्लव लगाकर होम करे ॥ ६ ॥

शस्त्रेण च्छित्त्वा अष्टोत्तरशतं होमं कुर्यात्। सप्ताहेन वशी भवति ॥ ७ ॥

छुरीसे काटकर एक मालाका होम करै तो सात दिनमें वशी होय ॥ ७ ॥

अथ स्त्रीवशीकरणम्।

आसुरीपिष्टेन प्रतिमां कृत्वा वामपादमारभ्य घृताक्तां जुहुयात्। सप्ताहेन वशिनी भवति ॥८॥

आसुरी पिट्ठीसे मूर्ति बनाकर बायें पैरसे आरंभ कर घीमें मिलाकर होम करै तौ सात दिनमें स्त्री वश होय॥८॥

अथ क्षत्रियवशीकरणम्।

आसुरीं सुगुडयुक्तां जुहुयात्। सप्ताहेन वशी भवति ॥ ९ ॥

आसुरीको अच्छे गुडमें मिलाकर हवन करै तौ सात दिनमें क्षत्रिय वशी होय ॥ ९ ॥

अथ शूद्रवशीकरणम् ।

आसुरीं लवणयुक्तां जुहुयात् । सप्ताहेन वशी भवति ॥ १० ॥

आसुरीको नमकमें मिलाकर हवन करै तौ शूद्र वशी होय ॥ १० ॥

अथ शत्रुघातः ।

निंबकाष्ठैरग्निं प्रज्वाल्य स्वरोमाणि कटुकपत्रैस्तैलाक्तानि जुहुयादष्टोत्तरशतद्वयम् । सप्ताहेन वशी भवति तथा मृतो भवति ॥११॥

नींबकी लकडियोंसे अग्नि जलाकर अपने रोम कडवे तेलमें मिलाकर होम करै दोसौ आठ आहुति दे, सात दिनमें वशी होय तथा मरजाय ॥ ११ ॥

अर्कसमिद्भिरग्निं प्रज्वाल्यार्कक्षीराक्तामासुरीं जुहुयात् । स्वस्थो भवति ॥ १२ ॥

आककी समिधोंसे अग्नि जलाकर आकके दूधमें आसुरी मिलाके हवन करै तो आराम होय ॥ १२ ॥

स्वरोमाणि आसुरीं चैकीकृत्य यस्य नाम्ना जुहुयात्सप्ताहेन अपस्मारी भवति। प्रत्यानयने क्षीराक्तां जुहुयात् स्वस्थो भवति॥ १३ ॥

अपने रोम और आसुरीको मिलाकर जिसके नामसे होम करै उसके सात दिनमें मृगी रोग होजाय, अच्छा करना हो तो दूधमें मिलाकर हवन करै ॥ १३ ॥

आसुरीं लवणसंयुक्तां यस्य नाम्ना जुहुयात् १०८, सप्ताहेन गृह्यते, पुनः क्षीराक्तां जुहुयात् स्वस्थो भवति। आसुरीचिताभस्ममहामांसभृतकानि मेलयित्वा एकीकृत्य अष्टोत्तरशतवारमभिमन्त्र्य यस्योपरि क्षिपेत् स उन्मत्तो भवति । प्रत्यानयने आसुरीमजाक्षीरेण जुहुयात् सप्ताहेन स्वस्थो भवति। आसुरीं निम्ब-

पत्रैः सह यस्य नाम्ना जुहुयात् स विस्फोटकैर्गृ-
ह्यते। आसुरीं घृताक्तां जुहुयात्स्वस्थो भवति।
तगरं कुष्ठं मांसीम् आसुरीपुष्पाणि च सम-
भागचूर्णं कृत्वा अष्टोत्तरशतवारमभिमन्त्र्य यं
स्पृशति सः स्मरणमात्रेणानुचरो भवति॥ १४॥

राई नमकके साथ मिलाकर जिसके नामसे १०८ बार सात दिनतक हवन करै वह सात दिनमें वशी हो । फिर दूधमें मिला होमै तो अच्छा हो । राईको चिताकी भस्म तथा सूकरके मांसमें मिला १०८ बार मंत्रित कर जिसपर गेरे वह पागल होजाय, अच्छा करना हो तौ आसुरीको बकरीके दूधमें मिलाय होम करै तौ सात दिनमें अच्छा हो । आसुरीको नींबके पत्तोंके साथ जिसके नामसे हवन करै उसके फोडे फुन्सी होजायँ । आसु-रीको घीमें मिलाकर हवन करै तौ अच्छा होजाय । तगर, कूठ, जटामांसी, आसुरीके फूल, समभाग चूर्ण

कर १०८ बार मंत्रित कर जिसको छूवे वह स्मरण मात्रसेही दास हो ॥ १४ ॥

उशीरं तगरं कुष्ठं मुस्तं सिद्धार्थमेव च ।
आसुरीपुष्पसंयुक्तं सूक्ष्मचूर्णं च कारयेत् ॥
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा यं पश्येत्स वशी भवेत् १५

खस, तगर, कूठ, मोथा और, आसुरीके फूल मिलाकर चूर्ण करै । मूल मंत्रको १०८ बार जपकर जिसको देखै वह वशी हो ॥ १५ ॥

आसुरीमूलपत्राणि पुष्पाणि त्वक् फलानि च ।
कुर्वीत मद्ययुक्तानि सूक्ष्मचूर्णश्च कारयेत् ॥
अष्टोत्तरशतवारं चाभिमन्त्र्य यं स्पृशेत्स वशी भवेत् ॥ १६ ॥

आसुरीका पंचांग मद्य सहित करके सूक्ष्म चूरण-कर एकसौ आठ बार मंत्रितकर जिसको छुवे वह वशीभूत होजाय ॥ १६ ॥

मनःशिला प्रियङ्गुश्च तगरं नागकेशरम् ।
आसुरीपुष्पसंयुक्तं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
अष्टोत्तरशतवारमभिमन्त्र्य यः स्पृष्टो
भवति स वशी भवति ॥ १७ ॥

मैनासिल, मालकांगुनी, तगर, नागकेसर इनको आसुरीके फूलोंसहित सूक्ष्म चूर्ण करै । पीछे १०८ बार मंत्रितकर जिसको छूवे वह वशी हो ॥ १७ ॥

आसुरीपुष्पसौबीजं राजानं नागकेशरम् ।
एतानि सूक्ष्मचूर्णानि कृत्वा अष्टोत्तरशत-
वारमभिमन्त्र्य तेन चक्षुषी अंजयित्वा यं
पश्यति स वशी भवेत् ॥ १८ ॥

आसुरीके फूल, सौबीज, राजान, नागकेशर इनका सूक्ष्म चूरणकर १०८ बार मंत्रितकर आंखोंमें आँज जिसको देखे वह वशी होय ॥ १८ ॥

आसुरीपंचांगेनात्मनात्मानं धूपयेत् । यं गन्धेन जिघ्रति स वशी भवति।आसुरीसमिधं घृताक्तां जुहुयात् सप्ताहेन निधिलाभो भवेत्।पुत्रार्थी पुत्रं लभेत्।दधिमधुघृताक्तामासुरीं दशसहस्रं जुहुयात् शतायुर्भवति ॥१९॥

आसुरीके पंचांगसे अपने देहको धूप दे,पीछे जिसको सूँघे वह वशी हो आसुरीकी समिधा (लकडी) को घीमें मिलाकर होम करे तो सात दिनमें खजाना लाभ हो,पुत्र चाहनेवालेको पुत्र मिले। दही सहत घीमें आसुरी मिलाय दश सहस्र मंत्र जप होमै तौ सौ वर्षकी आयु हो॥१९॥

राज्यार्थी दधिमधुघृताक्तामासुरीं दशसहस्रं जुहुयात् । आसुरीपल्लवैरष्टोत्तरशताभिमन्त्रितकलशजलेन स्नात्वा धूपयेदात्मानं लक्ष्मीर्न मुंचति । चातुर्मासादिज्वरं मुंचति ॥ २० ॥

राज्य चाहनेवाला दही सहत घीमें राई मिलाके एक सहस्र नित्य हवन करे । आसुरीके पत्तोंसे १०८ बार

मंत्रितकर कलशके जलसे स्नानकर शरीरको धूप दे, उसको लक्ष्मी नहिं छोडे। चारमासमें आनेवाला ज्वरभी छूटजाय ॥ २० ॥

सहनामाष्टोत्तरशतजपेन मार्जयेत् । मुंचति क्षिप्रं दुष्टगृहीतानामासुरीहोमेन सप्ताहेन मुंचति तथा दशवारान् परिजप्य शिरसि दापयेत् गृहीतो मुंचति। क्षिप्रं तुसलीसहदेवीचूर्णं कृत्वा यं स्पृशति स वशी भवति। मारीभये राजभये मार्जिता वारिणा तथा। तस्य नश्यन्ति भूतादिकः भूतोपद्रवस्तथा आसुरीं प्रतिमां राज्यवश्यार्थं प्रक्षिपेदर्कपत्रेषु संस्थापनं ब्राह्मणवश्यार्थी पलाशपत्रेषु स्थापनं कृत्वा आरंभं कुर्यात् ॥ २१ ॥

नामके साथ १०८ जपसे मार्जन करै तौ छूटजाय। जल्दी दुष्टोंसे पकडे हुए आसुरी होमसे छूटजाय । वैसेही

दशवार जपकर शिरपर दे, पकडाहुआ छूटजाय । शीघ्र तुलसी सहदेईका चूर्ण करके जिसको छूवे वह वशी होजाय, हैजेके भयमें राजाके भयमें जलसे मार्जन करै तौ उसके भूत प्रेतादिककी बाधा नष्ट होजाय, भूपके साथ आसुरीकी प्रतिमा करे, राज चाहनेवाला फेंके हुए आकके पत्तोंपर स्थापन करै । ब्राह्मणको वश करनेवाला ढाकके पत्तोंपर स्थापनकर आरंभ करे ॥ २१ ॥

अथर्वणस्य शेषोक्तं च तेन गणभयं गणरौद्रं गणे रक्षां कुर्यात् ॥ २२ ॥

अथर्वणवेदका शेष कहदिया । इससे गणोंका भय रौद्रगणोंसे रक्षा करै ॥ २२ ॥

अथ ध्यानं मारणार्थम् ।

मारणे चतुर्भुजामभयवरदहस्तां हस्तिमुखीं लंबोदरवधूं मेघनादां दंष्ट्रार्पितहस्तामजन-जनां वामखर्परहस्तां मृतमानुषोपरि स्थितां राक्षसादिवेष्टितां ध्यायेत् ॥ २३ ॥

अथ मारणके लिये ध्यान ।

मारणमें चार हाथ अभय-वर हाथवाली हाथीकासा मुख लंबे पेटवालेकी बहू मेघनादवाली बडे दांत जन-रहित बांये हाथमें खप्पर धरे मुरदेकी सवारीवाली राक्षसोंसे घिरीहुई देवीका ध्यान करै ॥ २३ ॥

अथ स्तंभने ध्यानम् ।

स्तंभने कपिलां चतुर्भुजां वामेऽभयवरदां दक्षिणे शक्तिखड्गौ दधतीं मुक्ताहारविभूषितां पद्मासनसंस्थितां ध्यायेत् ॥ २४ ॥

स्तंभनमें ध्यान ।

स्तंभनके लिये कपिलवर्ण चारभुजा बायें अभय और वरदानके दहिनेमें शक्ती और तलवार धारण करती हुई मोतियोंके हारसे भूषित पद्मासनसे बैठीहुईको ध्यावे ॥ २४ ॥

अथ मोहने ध्यानम् ।

मोहने लोहितवर्णां चतुर्भुजामभयवरदहस्तां वामे तूणीरधनुर्हस्तां दक्षिणे हेमालंकारभूषितां पद्मासनसंस्थितां भजेत् ॥ २५ ॥

अब मोहनके लिये ध्यान कहतेहैं—मोहन करनेको लाल रंग, चार हाथ, अभय वर बायें हाथमें, तूणीर (भाथा) धनुष दाहिने हाथमें, सोनेके गहनोंसे शोभित पद्मासन लगाये बैठीहुईको ध्यावे ॥ २५ ॥

अथ नष्टोच्चाटनध्यानम् ।

नष्टोच्चाटने नीलवर्णां चतुर्भुजामभयवरदशूल-मुद्राहस्तां माणिक्यादिभूषितां पद्मासनोपविष्टां ध्यायेत् । इति होमध्यानविधिः ॥ २६ ॥

अब नष्ट उच्चाटन ध्यान करे । नष्ट उच्चाटनमें नीले रंगकी देवीको ध्यावे, चारभुजा अभय वर त्रिशूल मुद्रा

हाथवाली माणिक आदि रत्नोंसे भूषित पद्मासन लगाये बैठी हुईको ध्यान करे । इति होमध्यानविधि ॥ २६ ॥

होमे विषयविशेषव्यवस्था ।

होमः । मंत्रमात्रेण सहस्रहोमः । मृगमांसेन शत्रुक्षयः पुत्रार्थं धनार्थं चतुष्कोणगोमय-मृत्तिकास्थंडिले होमः पंचांगुलिभिः॥२७॥

होम विधि । मंत्रहीसे १००० होम । शत्रुमारणको मृगके मांससे होम करै । पुत्रकेलिये वा धनके लिये चौकोर गोबर मट्टीके चौतरेपर पांचों अंगुलियोंसे होम करै ॥ २७ ॥

होमे हस्तमुद्रावेद्योर्व्यवस्था ।

शूकरीमुद्रया होमः कर्तव्यः । वशीकरणे हस्तिमुद्रया होमः।मारणे मृगमुद्रया होमः। शतहोमे एकहस्ता वेदिः। अयुते हस्तद्वया। लक्षे चतुर्हस्ता । इति वेदिप्रमाणम् ॥२८॥

इति श्रीमदथर्वणवेदोक्त आसुरीकल्पः सम्पूर्णः ।

शूकरी मुद्रासे होम करै । वशीकरणमें हस्ति मुद्रासे हवन करे । मारणमें मृग मुद्रासे होम करे । सौ मंत्रोंका हवन करे तो एक हाथकी वेदि बनावे । सहस्र मंत्रोंका हवन करै तौ दो हाथकी । लाख मंत्रोंके हवनको चार हाथकी वेदि बनावे । यह वेदीका प्रमाण हुआ ॥२८॥

इति अथर्ववेदान्तर्गत आसुरीकल्पकी
भाषाटीका समाप्त ।



ॐ श्रीगणेशाय नमः।

अथ श्रीउलूककल्पप्रयोग।

मैनशिल चन्दन कूठ मालकांगुनी गोरोचन गोघी उल्लूकी हड्डी सब पीसकर गोली बनाकर माथेमें लगावे सब वश हों।

" ॐ क्रैं प्रचण्ड ह्रीं स्फुरत्यघोरेश्वरी उल्कामुखी आशु उच्चाटवे ह्रीं फट् स्वाहा।"

३०८ उल्लूकी हड्डी मीठे तेलमें डार मूसरकी साम मिलाय कोरी हांडीमें गाड ४० रोज श्याम आसन बिछाय जप करे।

" ॐ ह्रीं ह्रीं हँ हँ हूँ फट् आवेशिनीं क्लीं स्वाहा "

१०८ जप करे।

फिर एक काली पतुरिया (वेश्या) के यहां आग लगीहो वहाँसे लै आवे अर्द्ध रात्रिको काजर पारे मन्त्र जपते जाय।

" ॐ बगुलामुखी सर्वस्त्रीहृदयं मम वश्यं कुरु ऐं ह्रीं स्वाहा" १०८ वार जपे काजर पारे, स्त्री वश हो।

उल्लूका नख कृष्ण मार्जारी धवैयका फूल सनावेकी लकडी मनुष्यकी हड्डी सब इतवारके दिन पीसकर गोली बनावे १०८ दफे रोज जपे, सर्व कार्यसिद्धि हो।

उल्लूके पंखका हाड बाटकर मस्तकपर लगावे अर्थात् तिलक देवै तो राजा वश हो " ॐ श्रीं श्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सर्वराज्यवशंकरी स्त्री हुंफट् स्वाहा " १०८ दफे मन्त्रसे मन्त्रित करे॥

उल्लूका हाथ पानीमें पीस खवावे राजा वश हो। " ॐ श्रीं श्रीं श्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं सर्वराजवश्यकरी स्वाहा " उल्लूकी चोटी पानीमें पीस लेपन करे (पगमें) पैरमें।

उल्लूकी आंख गौके दूधमें पीस गोली बांध घाममें सुखाय मुखमें रक्खे, राजा वश हो।

मालकांगुनीके तेलमें अञ्जन लगावे तो रात्रीको दिन दीखे।

" ॐ ह्रैं ह्रैं ह्रूँ ३ त्रिं मिं मैं ह्रौं फट् स्वाहा " इस मन्त्रका सौवार जप करे राजराजा वश हो ।

" ॐ क्लीं त्रैलोक्यमोहिनी ह्रीं फट् २ स्वाहा " १००० एक हजार जप करै एक टंक[1] उल्लूके खूनसे कृष्णा गौका दूध पांच सेर जमाकर घी काढे कृष्ण चतुर्दशीको जिस स्त्री पुरुषके लगावे सो पीछे २ फिरें ।

" ॐ नमो भगवते रुद्राय आगच्छ २ प्रविश्य २ धनुः २ आकर्षय २ मण्डलं प्रकाशय २ स्वाहा । "

फिर काजर पारे " ॐनमो भगवते रुद्राय ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा " १०८ रोज जपे, सात दिन एक हजार, १००० । दूसरे सात दिनमें दो हजार जप करै ।

" ॐ ह्रीं क्लीं फलाने बंधय आकर्ष कुरु २स्वाहा " उल्लू कबूतर भैंसीकी जंघाकी हड्डी गोरोचन इलायची कपूर केशर कस्तूरी जटामांसी उल्लूका पंख सब पीसकर कोरी हाण्डीमें रख चौदह दिन मन्त्रण करे ।

---

१ चार मासेका एक टंक होता है ।

"ॐ ह्रीं क्लीं अदशेश्वरी ह्रीं ठः३ हा३ ऐं फट् स्वाहा" १०८ बार चौदह १४ दिन मन्त्रण करे माथेमें तिलक दे यावज्जीवन वश हो ।

शत्रुकी काती सूत और वामपदकी मिट्टीकी सात पुतली बनाय हृदयमें उसके नाम (भाल) लिखे ।

उल्लूका हाथ पीली सरसों मिरच नोन राई मिलाय हवन करे ।

"ॐ म्रिं म्रिं मृतेश्वरी कृत्यममुकम् आशु भक्षय भक्षय ह्रीं क्लीं स्वादय ह्रीं स्वाहा" १०००० जप करे शत्रुनाश हो ।

॥ इति उलूककल्प समाप्त ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
" लक्ष्मीवेंकटेश्वर " स्टीम् प्रेस,
कल्याण-मुंबई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
" श्रीवेङ्कटेश्वर " स्टीम् प्रेस,
खेतवाडी-मुंबई.

	कीं. रु. आ.
आश्चर्ययोगमालातन्त्र—सिद्ध नागार्जुनप्रणीत, स्व० पं० बलदेवप्रसादमिश्रकृत भाषाटीकासहित	०—४
(बृहत्) इन्द्रजाल—अर्थात् कौतुकरत्नभाण्डागार-(संस्कृत और भाषा) ...	१—८
उच्छिष्टगणपतिपञ्चाङ्ग तथा उच्छिष्टचण्डालिन्युपासना	१—०
उड्डीशतन्त्र—रावणविरचित मूल तथा मुरादाबादनिवासी श्यामसुन्दरलाल त्रिपाठीकृत भाषाटीकासहित	०—६
कामरत्न—योगेश्वर नित्यनाथप्रणीत तथा स्व० वि० वा० पं० ज्वालाप्रसादमिश्रकृत भाषाटीकासहित	२—४
क्रियोड्डीशतन्त्र—इन्द्रजिद्विरचित भाषाटीकासहित	०—१०

	की. रु. आ.
गायत्रीपञ्चाङ्ग	१—०
गायत्रीमन्त्रार्थ भास्कर—सायणादिभाष्य और भाषाभाष्यसहित	१—०
गुप्तसाधनतन्त्र—शिवप्रणीत, स्व० पं० बलदेवप्रसादमिश्रकृत भाषाटीकासहित ...	०—६
गौतमीयतन्त्र—महर्षि गौतमप्रणीत ...	१—८
श्रीतत्त्वनिधि	४—०
हनुमदुपासना रेशमी गुटका	२—०
गन्धोत्तमनिर्णयतन्त्र—इसमें मद्यका विवेचन है	०—८
योगिनीतन्त्र—भाषाटीका	४—०
शाक्तप्रमोद	६—०
मंत्रमहार्णव	१८—०
महानिर्वाणतन्त्र—भाषाटीकासहित ...	४—०
दुर्गासप्तशती—सातटीकासहित	४—०
मेरुतन्त्र	७—०